विचार संगम

भारतीय दर्शन, विज्ञान, साहित्य-कला और तकनीकी के विशेष संदर्भ में

सम्पादक
डॉ. दिनेश चन्द्र शर्मा

विचार संगम

भारतीय दर्शन, विज्ञान, साहित्य-कला और तकनीकी के विशेष संदर्भ में

सम्पादक :

डॉ. दिनेश चन्द्र शर्मा

Ph.D., D.Lit. (Sub.)

निदेशक, कॉम्पिटिशन प्लस ग्रुप ऑफ इन्स्टीट्यूशन,
अजमेर

Books n Books

51/1509, आचमन, वेदविहार,
लोहाखान, अजमेर-305001

प्रकाशक :

पुष्पा शर्मा

Books n Books

51/1509, आचमन, वेदविहार,

लोहाखान, अजमेर-305001

ई-मेल : bnbajmer@gmail.com

संस्करण

प्रथम 2025

ISBN : 978-81-993854-0-5

मूल्य - 400/-

रचना - विचार संगम-भारतीय दर्शन, विज्ञान, साहित्य-कला और तकनीकी के विशेष संदर्भ में

सम्पादक - डॉ. दिनेश चन्द्र शर्मा

मुद्रक - श्रीनिवास प्रिन्टोग्राफिक्स, अजमेर

14

बुल्ले शाह और उनका रहस्यवाद

श्वेता त्रिवेदी
सहायक आचार्य (शिक्षा विभाग)
हुकुमचन्द नोबेल इंस्टीट्यूट ऑफ साईंस एण्ड टेक्नोलॉजी, अजमेर

बुल्ले शाह ने मीरा बाई की भाँति ईश्वर-प्रेम को अपनी भक्ति का केंद्र बनाया। उन्होंने अपने काव्य में लौकिक प्रेम कथाओं (हीर-रांझा, लैला-मजनूँ, सस्सी-पुन्नू आदि) और भारतीय प्रतीकों (कृष्ण, बांसुरी, वृंदावन, गंगा आदि) का प्रतीकात्मक प्रयोग कर अलौकिक प्रेम की अनुभूति कराई। उनके अनुसार मनुष्य का शरीर ही ईश्वर का मंदिर है, जहाँ हिंदू और मुसलमान दोनों परंपराएँ एक रूप में मिलती हैं। उनकी रचनाओं में हिंदी और पंजाबी दोनों भाषाओं का प्रयोग हुआ है। बुल्ले शाह का 'कलाम' अद्वैतवाद पर आधारित है जो ईश्वर और आत्मा की एकता का संदेश देता है तथा प्रेम की उस दैविक अग्नि को प्रकट करता है जो भक्त की आत्मा का पोषण करती है।

बुल्ले शाह ने मानव जीवन के दुखों से मुक्ति का मार्ग आध्यात्मिक सत्य की प्राप्ति में बताया है। उनके अनुसार, हज, व्रत, तप, या बाह्य पूजा से मुक्ति नहीं मिलती; बल्कि सद्गुरु की शरण लेकर जब मन निर्मल होता है, तभी जीवात्मा परमात्मा में लीन होकर सच्चे आनंद को प्राप्त करती है। उन्होंने मंदिर, मस्जिद, वेद या कुरान में नहीं, बल्कि आत्मा के भीतर बसे 'अनहद नाद' में प्रभु को खोजने का उपदेश दिया। उनके काफियों में समाज की धार्मिक संकीर्णताओं और बाह्य आडंबरों का खंडन तथा प्रेम, भक्ति और आत्मानुभूति का संदेश है।

इसी प्रकार, सूफी परंपरा के शेख फरीद ने भी ईश्वर-भक्ति को जीवन का सर्वोच्च उद्देश्य माना। उन्होंने कहा कि संसार की माया में लिप्त मन प्रभु से दूर रहता है, पर जब मन निर्मल होता है, तब आत्मा परमात्मा से मिलकर आनन्द को प्राप्त करती है। इस प्रकार बुल्ले शाह और बाबा फरीद दोनों ने आंतरिक भक्ति, आत्मशुद्धि और ईश्वर से एकात्म भाव को मुक्ति का सच्चा मार्ग माना है।

बाबा फरीद ने संसार को दुखों का घर बताते हुए यह शिक्षा दी कि सच्चा आनंद इस माया-जगत में नहीं, बल्कि ईश्वर से मिलन में है। उनके अनुसार, यह संसार ईर्ष्या, मोह, लालच और विनाश का जाल है, जिसमें फँसकर मनुष्य शांति खो

देता है। उन्होंने समझाया कि सदैव परम तत्व की ओर मन लगाना ही मुक्ति का मार्ग है। जो व्यक्ति संसार को सत्य मानकर उसी में लिप्त रहता है, वह पशु–समान जीवन जीता है।

कबीर और तुलसीदास जैसे संतों ने भी इसी सत्य का प्रतिपादन किया कि जगत दुखमय है और केवल संतजन, जो ईश्वर में मन लगाते हैं, वही सच्चे सुखी हैं। अत: बाबा फरीद का उपदेश यह है कि मनुष्य संसार के मोह से ऊपर उठकर प्रभु के सान्निध्य में वास्तविक परमानंद की प्राप्ति करे।

बुल्ले शाह के विचारों पर शेख फरीद का गहरा प्रभाव देखा जाता है। दोनों संतों ने सांसारिक मोह–माया से ऊपर उठकर जीव को परम तत्त्व में लगने का उपदेश दिया। बुल्ले शाह ने कहा कि जीवन को भौतिक आकर्षणों में व्यर्थ करने से परमानंद की प्राप्ति नहीं होती, जबकि शेख फरीद ने भी यही समझाया कि जो मनुष्य शैतानी प्रवृत्तियों में उलझा है, वह ईश्वर की ओर लौट नहीं सकता। गुरु नानक और शेख फरीद दोनों ने प्रभु–वाणी को आत्मानंद की अभिव्यक्ति माना।

बुल्ले शाह का रहस्यवादी जीवन कबीर की निर्गुण भक्ति से मेल खाता है। दोनों के काव्य में अद्वैतवाद की भावना प्रमुख है जहाँ साधना का अद्वैतवाद आत्मा और परमात्मा की एकता को व्यक्त करता है, वहीं काव्य का रहस्यवाद उसी अनुभूति को शब्दों में प्रकट करता है। इस प्रकार बुल्ले शाह, शेख फरीद और कबीर तीनों ने आध्यात्मिक एकता और ईश्वर के प्रति आत्मसमपज़्ण को मानव जीवन का परम लक्ष्य माना।

कबीर, बुल्ले शाह और बाबा फरीद तीनों संतों की भक्ति की मूल भावना अद्वैतवाद और नि:स्वार्थ प्रेम पर आधारित है। कबीर ने कहा कि जब साधक सच्चे प्रेम में डूब जाता है, तो उसे हर ओर ईश्वर ही दिखाई देता है, यही अद्वैत की अनुभूति है। उन्होंने जीवात्मा और ब्रह्म की एकता को 'जल में कुंभ, कुंभ में जल' के प्रतीक से स्पष्ट किया।

कबीर के अनुसार सच्चा सतगुरु वही है जो प्रेम का अमृत पान कराए और ब्रह्म के द्वार तक पहुँचने का मार्ग दिखाए। प्रेम की वर्षा में भीगकर आत्मा शुद्ध और आनंदमय हो जाती है। वे बुल्ले शाह की तरह अनुभवजन्य भक्ति के पक्षधर थे — ज्ञान पुस्तकों में नहीं, बल्कि आत्मानुभूति में निहित है। इस प्रकार कबीर का प्रेम–सिद्धांत, बुल्ले शाह और बाबा फरीद के सूफी अद्वैतवाद का ही एक सशक्त रूप है, जो आत्मा और परमात्मा की एकत्व भावना को प्रेम के माध्यम से प्रकट करता है।

सूफी परंपरा में प्रेम और समर्पण को ईश्वरप्राप्ति का सर्वोच्च साधन माना गया है। यह भावना भारतीय वेदांत के सिद्धांत 'आत्मवत् सर्वभूतेषु' के समान है। कबीर ने इसी आत्मीय प्रेम को भक्ति का सार बताया — उनके अनुसार, सच्चा भक्त ईश्वर

का दास बनकर उसी की इच्छा में जीता है।

बुल्ले शाह ने भी ईश्वर-प्रेम को 'इश्क' कहकर उसकी सर्वोच्चता को प्रतिपादित किया। उन्होंने कहा कि जब तक सांसारिक प्रेम (इश्क मज़ाजी) से ऊपर उठकर ईश्वरीय प्रेम (इश्क हकीकी) नहीं मिलता, तब तक आत्मा शांत नहीं होती। उनका इश्क पूर्ण आत्मसमर्पण और एकत्व की अनुभूति है जहाँ 'मैं' मिट जाता है और केवल 'तु' रह जाता है।

बुल्ले शाह ने ज्ञान (इल्म) और प्रेम (इश्क) दोनों को महत्व दिया, परंतु अंततः यह निष्कर्ष दिया कि सारा ज्ञान 'अलिफ' अर्थात् ईश्वर के नाम में समाहित है। इसलिए उन्होंने बौद्धिक तर्क से ऊपर उठकर प्रेम और अनुभव के मार्ग को सच्ची ईश्वर प्राप्ति का उपाय बताया।

अर्थात् सूफी संतों विशेषतः कबीर और बुल्ले शाह के लिए 'इश्क' केवल भावना नहीं, बल्कि वह दिव्य शक्ति है जो जीव को परमात्मा में विलीन कर देती है।

बुल्ले शाह के दर्शन में 'अलिफ' का प्रतीक अत्यंत गहरा आध्यात्मिक अर्थ रखता है। 'अलिफ' का आकार 1 (एक) की भांति है, जो परमात्मा की एकत्वता और अद्वैत स्वरूप का संकेत देता है। बुल्ले शाह के अनुसार मुक्ति के लिए केवल 'एक अलिफ' का ज्ञान अर्थात् ईश्वर की एकता का बोध ही पर्याप्त है। उन्होंने जीव को यह समझाने का प्रयास किया कि मनुष्य का जीवन अस्थायी है; जो कुछ वह संसार में रचता है, वह मृत्यु के बाद साथ नहीं जाता। इसलिए उसे अपने कर्मों और आत्मा के उद्देश्य पर विचार करना चाहिए।

बुल्ले शाह की काफियाँ साधारण भाषा में रचित आध्यात्मिक अनुभवों की कविताएँ हैं, जिनमें लोकभाषा, अरबी-फारसी शब्द, और पंजाब की सांस्कृतिक परंपराएँ सहज रूप से मिश्रित हैं। उनकी रचनाएँ जैसे बारहमासा (12 माह), हरियांव दोहे, सिरसिया, बावरी और 8 पारियाँ — सभी में प्रेम, वियोग, और आत्मानुभूति का गहन भाव मिलता है।

बुल्ले शाह का जन्म पंजाब क्षेत्र के अंडों के भटिया में हुआ था। उनके पिता के निधन के बाद उन्होंने अपनी प्रारंभिक शिक्षा कसूर के प्रसिद्ध विद्वानों — हजरत गुलाम मुर्तजा और मौलाना मोहिउद्दीन से प्राप्त की। वे सूफी मत के कादरी-अत्तारी संप्रदाय से सम्बद्ध थे, जिसका प्रवर्तन शेख अब्दुल कादिर जीलानी द्वारा हुआ था। यह संप्रदाय आध्यात्मिक साधना, भक्ति और सांसारिक त्याग पर बल देता है।

भारत में इस मत का प्रचार शेख मोहम्मद गौस द्वारा 15वीं शताब्दी में हुआ। कादरी परंपरा में पीर मियां मीर एक अत्यंत प्रसिद्ध संत माने जाते हैं, जिनके शिष्य दारा शिकोह जैसे विद्वान भी रहे। इसी संप्रदाय की परंपरा में बुल्ले शाह ने आध्यात्मिक जीवन को अपनाया और अपने गुरु के रूप में मियां शा इनायत कादरी से दीक्षा

लेकर सूफी साधना के उच्च शिखर को प्राप्त किया।

बुल्ले शाह के अध्ययन हेतु अनेक विद्वानों और ग्रंथों ने मूल्यवान सामग्री प्रदान की है, जिनमें कानून-ए-इश्क (हजरत अनवर अली रोहतगी), कुलयाद-ए-बुल्लेशाह (डॉ. फकीर मोहम्मद), कलाम बुल्ले शाह (डॉ. गुरुदेव सिंह एवं डॉ. नजीर अहमद), काफियां बुल्ले शाह (अब्दुल मजीद भट्टी), बुल्ले शाह विवेचन ते रचना ते (प्रो. जी.एल. शर्मा), साईं बुल्ले शाह (प्यारा सिंह पदम), तथा बुल्ले शाह डायलॉग सहयोग (डॉ. विक्रम सिंह घूमर) प्रमुख हैं। इन ग्रंथों में बुल्ले शाह की काफियाँ उनके सूफी चिंतन, प्रेम-दर्शन, और अद्वैत भाव को प्रकट करती हैं। उनकी काफियाँ न केवल भक्ति और आध्यात्म का प्रतीक हैं, बल्कि लय, ताल और संगीत से संपृक्त होकर जन-जन तक पहुँचीं।

बुल्ले शाह की अन्य रचनाओं में बारहमासा (12 माह), सिहरफी और गंडा भी प्रमुख हैं, जिनमें उन्होंने प्रेम, वियोग और परमात्मा से एकत्व की अनुभूति को व्यक्त किया है। उनके जन्मकाल के विषय में विद्वानों में मतभेद है—सी.एफ. उसबार ने उनका जन्म 1680 ई. में बताया है, जबकि डॉ. फकीर मोहम्मद के अनुसार यह 1148 हिजरी के आसपास माना जाता है। अधिकांश विद्वानों का मत है कि बुल्ले शाह का जीवनकाल लगभग सोलहवीं से सत्रहवीं शताब्दी के मध्य तक रहा।

साईं बुल्लेशाह का बारहमासा पंजाबी लोक-काव्य की परंपरा में अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान रखता है। यह रचना विरह, प्रेम और अध्यात्म के अद्‌भुत संगम का प्रतीक है। हिंदी साहित्य में बारहमासा की परंपरा की शुरुआत मलिक मुहम्मद जायसी ने पद्मावत में की थी, किंतु बुल्ले शाह ने इसे सूफी भाव से संपृक्त कर आत्मा और परमात्मा के मिलन-वियोग की प्रतीकात्मक कथा बना दिया।

उन्होंने आश्विन से भाद्रपद तक बारह महीनों को लेकर अपने भावों की अभिव्यक्ति की है जहाँ हर मास प्रेम-विरह की एक विशेष स्थिति को दर्शाता है।

आश्विन में प्रिय को संदेश भेजने की तड़प है, कार्तिक में संयोग की कठिनता, मार्गशीर्ष में ज्ञान की निष्फलता, पौष में मोह का कारण, माघ में अश्रु और तप का स्नान, फाल्गुन में प्रकृति की शोभा में प्रेम की स्मृति, चैत्र में कोयल की पुकार से हृदय की वेदना, बैशाख में संग-साथ के बिना जीवन की रिक्तता, ज्येष्ठ में वियोग की अग्नि, आषाढ़ में प्रेम की जलन, श्रावण में मेघों से आशा, और भाद्रपद में आत्मा और परमात्मा के मिलन का आनंद।

बुल्ले शाह के बारहमासा में लोकभावना, सूफी प्रतीकवाद और भक्ति की मधुर धारा एक साथ प्रवाहित होती है। यह रचना मानव-हृदय की गहराइयों में छिपे प्रेम और वियोग की अनुभूति को बारह महीनों के रूपक में अत्यंत सजीव रूप में व्यक्त करती है।

सईं बुल्लेशाह की 'सीहरफी' रचनाएँ उनकी सूफी काव्य-परंपरा की अत्यंत महत्वपूर्ण कृतियाँ हैं। हिन्दी में जहाँ 'बावन अक्षरी' परंपरा अक्षरों के आधार पर भक्ति या दार्शनिक भाव व्यक्त करने के लिए प्रसिद्ध रही, वहीं फारसी और उदूज़ में इसी प्रकार तीस अक्षरों (अलिफ से ये तक) पर आधारित 'सीहरफी' लिखने की प्रथा थी। बुल्ले शाह ने इसी शैली में तीन सीहरफियाँ रचीं।

इनकी मुख्य विषयवस्तु सूफीमत और ईश्वरीय प्रेम है, जिसमें आत्मा की परमात्मा से एकत्व की तीव्र आकांक्षा व्यक्त की गई है।

'लागी रे लागी बल बल जावे' जैसे पदों में उस ईश्वरीय प्रेम की अग्नि का वर्णन है, जो आत्मा को जलाती भी है और शुद्ध भी करती है।

'अलिफ' पद में अल्लाह की उपस्थिति से उत्पन्न विरह की तीव्र पीड़ा प्रकट होती है — ऐसा प्रेमी जो ईश्वर के बिना असह्य वेदना में रोता है।

'ते' पद में आत्मा की भक्ति को बकरी और ईश्वर को कसाई के रूप में प्रतीकित किया गया है, जहाँ प्रेम में संपूर्ण समर्पण और आत्म-बलिदान की भावना प्रकट होती है।

इस प्रकार, बुल्ले शाह की 'सीहरफी' न केवल सूफी भक्ति का दार्शनिक परिचायक है, बल्कि यह आत्मा और परमात्मा के मिलन की तड़प, विरह, समर्पण और प्रेम-आग्नि का अद्वितीय काव्यात्मक चित्रण प्रस्तुत करती है।

साईं बुल्लेशाह की रचना 'अठवारा' पंजाबी लोक-काव्य और सूफी काव्य-परंपरा का एक विशिष्ट उदाहरण है। जिस प्रकार 'बारहमासा' में वर्ष के बारह महीनों के माध्यम से प्रेम और विरह का चित्रण किया जाता है, उसी प्रकार 'अठवारा' में सप्ताह के सात दिनों के प्रतीक द्वारा आध्यात्मिक यात्रा और ईश-प्रेम की अनुभूति प्रकट की गई है।

बुल्लेशाह ने 'अठवारा' की शुरुआत शनिवार (छनिछरवार) से की और अंत शुक्रवार (जुम्मा) पर किया। प्रत्येक दिन आत्मा और परमात्मा के मिलन की आशा, विरह, साधना, और आत्म-चिंतन को रूपक के माध्यम से प्रस्तुत करता है।

उदाहरणत: शनिवार में विरह की व्याकुलता और ईश्वर-दशज़्न की उत्कंठा, रविवार में प्रेम के प्रति पूर्ण समर्पण, सोमवार में आत्मा की तृषा और प्रियतम के लिए प्रतीक्षा, बुधवार में आत्मा और परमात्मा के सूक्ष्म संबंध का बिंब, और शुक्रवार (जुम्मेरात) में ईश्वरीय मिलन की आनंदानुभूति व्यक्त की गई है।

साईं बुल्लेशाह के दोहों में भी यही भावधारा प्रवाहित है। उनमें प्रेम, भक्ति, सत्य, और आत्मा-परमात्मा के एकत्व का दर्शन होता है। उन्होंने कपट, कर्मकांड और बाह्य आडंबरों की निंदा करते हुए आंतरिक भक्ति और आत्मशुद्धि को ही सच्चा

धर्म बताया।

सूफी मत के अनुरूप बुल्ले शाह का संदेश यही है कि — "सच्चा प्रेम ही ईश्वर तक पहुँचने का मार्ग है; जो अपनी आत्मा को पूर्णतः प्रेम और समर्पण में अर्पित कर देता है, वही सच्चा सूफी है।"

मौलाना शिबली तथा राबिया बसरी चाहते थे कि स्वर्ग व नरक जलकर राख हो जाये। राबिया बसरी कहती हैं-"हे खुदा, यदि मैंने तुझे स्वर्गों के लालच के कारण प्यार किया है तो मुझे इनसे दूर रखना। यदि मैंने तुझे नरकों के भय के कारण चाहा है तो मुझे नरकों की आग में जलाना। परन्तु यदि मैंने तुझे तेरे लिए प्यार किया है तो मुझे अपने प्रकाश से वंचित न रखना।"

साईं बुल्लेशाह की वाणी में ईश-प्रेम, आत्मज्ञान और अद्वैत भाव का गहरा समन्वय दिखाई देता है। उन्होंने हजरत ईसा के उपदेश — "जब तक मैं संसार में हूँ, मैं संसार का प्रकाश हूँ", की भाँति ही यह संदेश दिया कि मनुष्य को जीते-जी आत्मा के प्रकाश को पहचानना चाहिए, क्योंकि मृत्यु के बाद कुछ भी साध्य नहीं रहता।

बुल्ले शाह के अनुसार — यह संसार माया का जाल है; इसके सभी पदार्थ नश्वर हैं। परमात्मा ही शाश्वत सत्य है, और उसी का ध्यान जीवन का परम लक्ष्य है। मुक्ति केवल सद्गुरु द्वारा प्रदत्त ज्ञान और सच्चे प्रेम से ही प्राप्त हो सकती है।

उन्होंने आचार्य शंकर के समान ही यह स्वीकार किया कि ज्ञान ही मुक्ति का मार्ग है, और यह ज्ञान तभी संभव है जब प्रेम और सद्गुरु का सान्निध्य प्राप्त हो।

बुल्ले शाह की काव्यात्मक रचनाओं में जीवात्मा और परमात्मा का संबंध प्रेमिका और प्रियतम के रूप में चित्रित है। जीवात्मा वियोग में तड़पती है, और अंततः अपने अहंकार, बंधन और भ्रम को त्यागकर पूर्णतः प्रभु में लीन हो जाती है।

वह संदेश देते हैं कि — "प्रेम ही वह सेतु है जो आत्मा को परमात्मा से जोड़ता है। जो अपने को प्रेम में अर्पित कर देता है, वही सच्चे अर्थों में प्रभु का अनुभव करता है।"

साईं बुल्ले शाह का दर्शन परमात्मा की सर्वव्यापकता और अद्वैत सत्य पर आधारित है। वे कहते हैं कि परमात्मा कोई बाह्य सत्ता नहीं, बल्कि प्रत्येक जीव की आत्मा में विद्यमान वह चेतना है जो अनंत रूपों में प्रकट होती रहती है। उनके अनुसार परमात्मा 'छुपा हुआ भी है और प्रकट भी' वही सृष्टि का रचयिता, पालनकर्ता और संहारक है।

बुल्ले शाह का 'सर्वधर्म अद्वैत' केवल धार्मिक सहिष्णुता नहीं, बल्कि एक तात्त्विक और आध्यात्मिक समता-बोध है, जिसमें सभी धर्मों के केंद्र में एक ही सत्य

का बोध कराया गया है। उनका यह अद्वैत भाव किसी राजनीतिक 'सर्वधर्म-समभाव' से ऊपर उठकर आध्यात्मिक एकत्व और मानवीय समानता का संदेश देता है।

उनके अनुसार इस सत्य की प्राप्ति का मार्ग केवल मुर्शिद (सद्गुरु) के माध्यम से संभव है, वही शिष्य को परमात्मा तक ले जाने वाला सच्चा मार्गदर्शक होता है। गुरु और शिष्य का संबंध उनके चिंतन का केन्द्रीय तत्व है।

बुल्ले शाह के विचार कबीर की पंक्तियों की ही गूंज प्रतीत होते हैं —

गुरु गोविन्द दोऊ खड़े, काके लागूँ पाय।

बलिहारी गुरु आपने, गोविन्द दियो बताय॥

इस प्रकार, बुल्ले शाह ने यह प्रतिपादित किया कि परमात्मा का साक्षात्कार गुरु-ज्ञान और प्रेममय भक्ति के माध्यम से ही संभव है, और वही जीवन को अध्यात्मिक सत्य के 'अद्वैत' में स्थापित करता है।

साईं बुल्ले शाह का दर्शन भारतीय अद्वैतवाद और सूफी रहस्यवाद का गहन संगम है। वे समाधि की अवस्था में वही अनुभूति व्यक्त करते हैं जो भारतीय ऋषियों ने 'परमानन्द' या 'ब्रह्म-साक्षात्कार' की स्थिति कही है— जहाँ न वाणी बोलती है, न कान सुनते हैं, केवल आत्मा और परमात्मा का एकत्व रह जाता है।

बुल्ले शाह के विचारों में धामिज़्क सीमाओं का कोई स्थान नहीं है। वे कहते हैं— ''कहू तुर्क हो कलमा पढ़ते हो, कहू भगत हिन्दू जप करते हो।''

इससे उनका आशय यह है कि ईश्वर सर्वत्र एक है, चाहे कोई उसे 'अल्लाह' कहे या 'राम'।

उनका रहस्यवाद केवल आध्यात्मिक नहीं, बल्कि सामाजिक चेतना से भी संपृक्त है। उन्होंने पाखंड, रुढ़िवाद और अंधभक्ति पर व्यंग्य करते हुए कहा कि केवल ग्रंथों का पाठ करने से नहीं, बल्कि प्रेम और अनुभूति से ईश्वर की प्राप्ति होती है—

'बण हाफिज हिफज कुरान करें, पढ़-पढ़ के साफ जुबान करें।'

उनकी प्रसिद्ध पंक्ति—

'सभ नगरां विच आमे वस्सदा, ओहो मेहर सराई दा'

उनके सर्वेश्वरवाद का परिचायक है। वे कहते हैं कि प्रभु प्रत्येक नगर, प्रत्येक जीव, प्रत्येक तत्व में व्याप्त है, और वही सृष्टि का आधार है।

अतः बुल्ले शाह का दर्शन ईश्वर के प्रति अनन्य प्रेम, आत्मा-परमात्मा के अद्वैत मिलन, धार्मिक एकता, और सामाजिक समरसता की एक समन्वित व्याख्या है — जो भारतीय दर्शन की 'एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्ति' भावना के साथ पूर्णतः सामंजस्य रखती है।

बुल्ले शाह की कविताओं में 'वज्द' वह आध्यात्मिक स्थिति है जहाँ 'मैं' और 'तु' का भेद समाप्त हो जाता है। वहाँ न वाणी बोलती है, न कान सुनते हैं, सब द्वंद्व

मिट जाते हैं, और केवल ईश्वर का अनुभव शेष रह जाता है। यह भारतीय दर्शन में बताई गई समाधि या तुरीयावस्था के समान है — 'जहाँ न द्वैत है, न वाणी; केवल आत्मा का आनंद है।' यह स्थिति आत्मा के 'परमात्मा में विलय' की प्रतीक है, वही 'इश्के-हकीकी' है जिसे सूफियों ने सत्य प्रेम कहा।

बुल्ले शाह का यह रहस्यवादी अनुभव सामान्य संत परंपरा से कुछ आगे जाता है। भारतीय संत कवियों (मीराबाई, सूरदास, रैदास आदि) में 'प्रेमिका'* या 'दुल्हन' का रूप आत्मा के प्रतीक के रूप में आता है, जो प्रियतम ईश्वर से मिलन चाहती है।

परंतु बुल्ले शाह यहाँ केवल 'प्रेमिका' नहीं, बल्कि 'माता' रूप में आत्मा को देखते हैं —

'ना मैं ब्याही, ना कुंवारी, बेटा गोद खेलावांगी।'

यहाँ 'स्त्रीत्व' केवल प्रतीक नहीं, बल्कि सृष्टि के मूल मातृशक्ति की ओर लौटना है — वह आद्यशक्ति, जो सबमें विद्यमान है। यह मातृसत्ता वाले सभ्यता-काल की ओर वापसी है, जहाँ सृजन, करुणा और प्रेम का आधिपत्य था।

बुल्ले शाह का दर्शन केवल रहस्यवादी नहीं, बल्कि सामाजिक क्रांति का रूप भी धारण करता है। वह धार्मिक आडंबर, जातिवाद और सामंती भेदभाव के विरुद्ध खड़े होते हैं — 'न हम हिन्दू न तुर्क जरूरी, नाम इशक दी है मनजूरी।'

यहाँ 'इश्क' (प्रेम) ही धर्म है यही उनका सर्वधर्म समभाव और सर्वेश्वरवाद है। वे कहते हैं कि रामदास और फतह मुहम्मद दोनों एक ही परम सत्ता के प्रतीक हैं। यह वही विचार है जो वेदांत, उपनिषद और कबीर सभी में प्रकट होता है —'एको सत्यं, विप्रा बहुधा वदंति।'

'साधो किस नूं कूक सुणावां' इस कविता में बुल्ले शाह कहते हैं कि सत्य, प्रेम या ईश्वर 'चोर' की तरह हृदय में छिपा है — 'मेरी बुक्कल दे विच्च चोर।'

यह आत्म-साक्षात्कार की स्थिति है, जहाँ सत्य भीतर पाया जाता है, बाहर नहीं। पर समाज इस रहस्य को नहीं समझता, वह हिन्दू-मुसलमान के नाम पर बँटकर झगड़ता रहता है।

बुल्ले शाह कहते हैं —

'ओहा आप साईं जिसनूं भाल लए, मैनूं ओसे दी गत जोर।'

यहाँ 'साईं' एक सार्वभौम सत्ता है — न इस्लाम का अल्लाह, न हिन्दुओं का राम, बल्कि मानवता का आत्मा-स्वरूप ईश्वर।

बुल्ले शाह का दर्शन अद्वैत, प्रेम और आत्मबोध का समन्वित रूप है। वे कहते हैं कि परमात्मा ही पतंग भी है और डोरी भी — सब कुछ उसी से संचालित है। यह उपनिषदों के 'एकमेव अद्वितीय' सत्य का सरल लोकरूप है।

उनके अनुसार सच्चा ज्ञान 'अलिफ' (ईश्वर की एकता) को पहचानने में है,

न कि ग्रंथों के अध्ययन या तर्क में। जितना मनुष्य बाहरी ज्ञान बढ़ाता है, उतना ही ईश्वर से दूर होता जाता है, क्योंकि वास्तविक ज्ञान विनम्रता और प्रेम से आता है, न कि अहंकार से।

वे मंसूर हल्लाज के 'अनलहक' की तरह आत्म-विलय का संदेश देते हैं—सत्य स्वयं में ही 'हकीकत' और 'शरीअत' दोनों है। बुल्ले शाह उपनिषदों की वाणी 'उठो, जागो, सत्य को जानो' को लोकभाषा में कहते हैं—'उठ जाग, खर्राटे मत मार, मौत को भूल मत जा।'

उनकी दृष्टि में देह मिटने वाली है—'खाकी खाक स्यों रल जाणा' पर आत्मा अमर है। वे अपने गुरु शाह इनायत के प्रति समर्पण करते हुए कहते हैं कि प्रेम ही मुक्ति का मार्ग है।

बुल्ले शाह का दर्शन उपनिषदों के अद्वैत, सूफी इश्के-हकीकी और भारतीय संत परंपरा के लोकभाव का अद्‌भुत संगम है—जहाँ सत्य, प्रेम और मानवता एक ही तत्त्व में विलीन हो जाते हैं।

बुल्ले शाह कहते हैं कि जब आत्मा ने 'अलस्तु बि रब्बिकुम' कहकर अल्लाह को स्वीकार किया था, तब वह उसी से एक थी; परंतु जब संसार में आई तो अज्ञानवश उस प्रियतम (ईश्वर) से दूर हो गई। वह स्वयं के दोषों—मूर्खता, आलस्य और गुणहीनता को स्वीकार करती है, पर कहती है कि शाह इनायत (गुरु) ने उसे ईश्वर से मिलाने का मार्ग दिखा दिया।

बुल्ले शाह के दोहे में रहस्यवाद की पराकाष्ठा दिखाई देती है। 'जब नूर (प्रकाश) प्रकट होता है, तब तूर पर्वत जल जाता है' यह संकेत है कि जब सत्य का अनुभव होता है, तो अहंकार नष्ट हो जाता है। जैसे मंसूर हल्लाज ने 'अनलहक' कहा और सूली पर चढ़ाया गया, वैसे ही जो रहस्य प्रकट करता है, वह संसार के विरोध का पात्र बनता है। इसलिए वे कहते हैं—''मैं बोले बिना रह नहीं सकता, पर बोलूँ तो लोग मार डालेंगे।'' यह रहस्य का मौन उपनिषदों की 'नेति-नेति' भावना से मिलता-जुलता है।

वे कहते हैं—'बिना मुर्शिदे कामिल (सिद्ध गुरु) के ईश्वर की इबादत व्यर्थ है।' यह गुरु-तत्त्व की वैदिक परंपरा से साम्यता रखता है, जहाँ गुरु को 'ब्रह्मस्वरूप' माना गया है।

बुल्ले शाह का दर्शन 'वहदतुल-वुजूद' अर्थात् अद्वैतवादी दृष्टि पर आधारित है—जीव, जगत और ईश्वर में कोई भेद नहीं। वेदांत की भाँति वे केवल ब्रह्म (ईश्वर) को ही परम सत्य मानते हैं। यद्यपि इस्लाम पुनर्जन्म को नहीं मानता, पर बुल्ले शाह 'आवागौन' के रूप में जन्म-मरण के चक्र को स्वीकार करते हैं।

भक्तिधारा का भी उन पर गहरा प्रभाव है—वे कृष्णभक्ति में गोपीभाव अपनाते

हैं। मुरली की ध्वनि सुनकर आत्मा (प्रेमिका) सब कुछ भूल जाती है और श्रीकृष्ण की ओर दौड़ पड़ती है। यह वैष्णव भक्ति की पराकाष्ठा है जहाँ प्रेम में आत्म-विस्मृति और परमात्मा में विलय होता है।

बुल्ले शाह के चिंतन पर सिख धर्म के प्रभाव का स्पष्ट संकेत मिलता है। पंजाब की भूमि में जन्म लेने और वहीं जीवन व्यतीत करने के कारण उनके विचारों और जीवनशैली में पंजाबी संस्कृति तथा सिख परंपरा की गहरी छाप दिखाई देती है। वे फारसी, शाहमुखी, देवनागरी और गुरुमुखी—सभी लिपियों का प्रयोग करते थे, जिससे उनके विचार दोनों समुदायों—मुस्लिम और सिख—के बीच सेतु बन गए।

बुल्ले शाह ने सिख गुरुओं के योगदान को श्रद्धा से स्वीकार किया। उन्होंने गुरु तेग बहादुर की बलिदानी भावना और गुरु गोविन्द सिंह द्वारा खालसा पंथ की स्थापना को ईश्वरीय प्रेरणा बताया। वे कहते हैं—

'कहूँ तेग बहादुर गाजी हो, कहूँ अपना पंथ बनाया है।'

अर्थात, कहीं तुम (ईश्वर) तेग बहादुर के रूप में प्रकट हुए और कहीं अपने ही मार्ग (पंथ) की रचना की। यह सिख धमज़ के आदर्शों के प्रति उनका गहरा सम्मान दर्शाता है।

बुल्ले शाह और सिख परंपरा दोनों ही ईश्वर-प्रेम, मानव-सेवा और सत्गुरु की महत्ता पर बल देते हैं। दोनों मतों में संगीत (कव्वाली, कीर्तन) को साधना का माध्यम माना गया है। बुल्ले शाह के अनुसार—

'मेरा साईं शाह इनायत, ओहो लंघावे पार।'

अर्थात, सच्चा गुरु ही आत्मा को भवसागर से पार उतारता है।

यह विचार सिख धर्म की उस मान्यता से मेल खाता है, जहाँ गुरु को ईश्वर का प्रतिबिंब कहा गया है। आदि ग्रंथ में भी लिखा है—

'हरि का सेवकु सो हरि जेहा, भेदु न जाणहु माणस देहा।'

अर्थात, हरि का सेवक (गुरु) उसी के समान है; दोनों में कोई भेद नहीं।

इसी भावना को संत चरणदास की शिष्या सहजोबाई ने भी दोहराया है कि— ''गुरु हरि से भी बढ़कर हैं, क्योंकि हरि ने जन्म दिया पर गुरु ने जन्म-मरण से मुक्ति दी।''

भारतीय चिंतन में सद्गुरु या सतगुरु को परम सत्य की प्राप्ति का अनिवार्य साधन माना गया है। गुरु ही वह प्रकाश है जो अज्ञान रूपी अंधकार को मिटाकर आत्मा को परमात्मा से मिलाता है। यह भाव वैदिक ऋषियों से लेकर उपनिषदों, भगवद्गीता और भक्ति-साहित्य तक समान रूप से पाया जाता है।

इसी प्रकार, सूफी संतों ने भी यही स्वीकार किया कि ईश्वर की प्राप्ति केवल उसके बनाए हुए 'कानून' या मार्ग पर चलकर ही हो सकती है। कुरान शरीफमें कहा

गया है कि —

"हर राष्ट्र को उसका एक शिक्षक (गुरु, पैगंबर, मार्गदर्शक) दिया गया।"

अर्थात्, परमात्मा ने प्रत्येक युग और प्रत्येक समुदाय के लिए किसी न किसी मार्गदर्शक को भेजा ताकि मनुष्य सत्य की राह पर चल सके। यही विचार सूफी मत में पीर, पैगंबर, मुर्शिद या सतगुरु के रूप में प्रकट हुआ है।

गुरु ग्रंथ साहब में भी यह भावना व्यक्त हुई है—

'जोति ओहा जुगति साइ सहि काइआ फेरि पलटीऐ।'

'नानक तू लहणा तूहै, गुरु अमर तू वीचारिआ।'

अर्थात्, गुरु का ज्ञान और उसका प्रकाश निरंतर है, शरीर भले बदलता रहे पर जोति वही रहती है।

बुल्ले शाह ने भी इस दिव्य गुरु-तत्त्व को आत्मा के उत्थान का एकमात्र माध्यम माना है। वे कहते हैं—

'बुल्ला शौह ने आंदा मैनूं इनायत दे बूहे,
जिस ने मैनूं पवाए चोले सावे ते सूहे।'

यहाँ बुल्ले शाह अपने गुरु शाह इनायत को 'इनायत' (कृपा) का द्वार खोलने वाला बताते हैं, वही उन्हें प्रेम और भक्ति के रंग में रंगता है।

बुल्ले शाह आगे कहते हैं —

'मैं लोहा ते ओह पारस है।'

अर्थात्, शिष्य तो साधारण लोहा है, जिसे गुरु पारस बनकर स्वर्ण में परिवर्तित कर देता है। यहाँ वे गुरु की शक्ति को आत्मा के परिवर्तन और दिव्य ज्ञान की कुंजी बताते हैं।

उनके विचारों में कबीर की झलक स्पष्ट दिखाई देती है — जैसे कबीर ने कहा था,

'गुरु गोविंद दोऊ खड़े, काके लागूं पाय।
बलिहारी गुरु आपने, जिन गोविंद दियो मिलाय॥'

वैसे ही बुल्ले शाह के लिए भी गुरु ही वह सेतु है जो जीवात्मा को परमात्मा से जोड़ता है। वे 'हीर और राँझा' के प्रतीक द्वारा इस आत्मा-परमात्मा के मिलन को व्यक्त करते हैं —

'हीर राँझे दे हो गए मेले,
भुल्ली हीर ढुंढेदी बेले,
राँझा यार बगल विच खेले।'

यहाँ 'हीर' जिज्ञासु आत्मा है जो ईश्वर को बाहर खोजती है, जबकि 'राँझा' (ईश्वर) तो उसी के भीतर विद्यमान है। गुरु ही वह है जो इस रहस्य को प्रकट करता

है कि 'जिसे तू खोज रहा है, वह तेरे भीतर ही है।'

बुल्ले शाह ने हिन्दू अद्वैतवाद की भावना को स्वीकार किया, जिसमें आत्मा और परमात्मा की एकता का सिद्धांत प्रमुख है। उन्होंने 'अनहद शब्द' या 'नाद' की अनुभूति का उल्लेख किया, जो संत परंपरा में ईश्वर साक्षात्कार का प्रतीक है। उनके काफिये—

'तैं कारन हब्सी होए हाँ, नौ दरवाजे बन्द कर सोए हाँ।' में उन्होंने योग-साधना के दशम द्वार (सहरि) की बात कही है, जहाँ साधक ईश्वर से एकाकार होता है। यहाँ 'नौ द्वार' शरीर के भौतिक छिद्र हैं, जिन्हें बंद करके साधक ध्यान में लीन होता है, और 'दसवां द्वार' आत्मिक ज्ञान का द्वार है।

बुल्ले शाह ने ईश्वर से मिलने की इस साधना को विवाह की लग्न से जोड़ा। उन्होंने कहा कि 'सुरती' (आत्मा) का 'काज' (विवाह) परमात्मा से है। उनके शब्दों में— 'कहो सुरती गल्ल काज दी, मैं गंढां केतीआं पाऊं।' यहाँ आत्मा-परमात्मा का मिलन एक दिव्य विवाह का प्रतीक है।

वे कहते हैं कि संसार में सब विद्वान और धर्माचार्य केवल चर्चा और शोर करते हैं, परंतु सच्चा अनुभव विरले को होता है—

'होर ने सभों गल्लडियां अल्लाह दी गल्ल,
कुझ रौला पाया आलमां, कुझ कागजां पाया झल्ल।'

यहाँ बुल्ले शाह का संकेत है कि केवल शास्त्र और वाद-विवाद से ईश्वर की प्राप्ति संभव नहीं; यह तो अंतर्मन की अनुभूति और प्रेम से ही संभव है।

उनके विचारों में कबीर का प्रभाव स्पष्ट दिखता है। जैसे कबीर ने कहा था—

'कबीर कागज की ओबरी, मसु के करम कपा।'
'पाहन बोरी पिरथमी, पंडित पाड़ी बाट।'

कबीर और बुल्ले शाह दोनों ही कर्मकाण्ड, अंधविश्वास और पाखंड का विरोध करते हैं। वे कहते हैं कि जिसने स्वयं अपने भीतर के दोषों को नहीं मिटाया, वह दूसरों को सच्चा मार्ग नहीं दिखा सकता—

'पड़ि पंडित अवरा समझाए, घर जलते की खबरि न पाए।'

निष्कर्षतः बुल्ले शाह का दर्शन धार्मिक भेदभाव से ऊपर उठकर मानवता, प्रेम और आत्मानुभूति पर आधारित है। उन्होंने सूफी रहस्यवाद को भारतीय भूमि की भावनाओं से जोड़ा, जिससे यह दर्शन केवल इस्लामी रहस्यवाद न रहकर संपूर्ण भारतीय अध्यात्म का अंग बन गया।